ISSN 2277-5897 SABLOG
PEER REVIEWED JOURNAL

131

लोक चेतना का राष्ट्रीय मासिक

सबलोग

सितम्बर 2024 • ₹ 40

बाजार में शिक्षा

- पेरिस ओलम्पिक में भारत
- राहुल गाँधी, जाति और सामाजिक न्याय
- शेख हसीना का राजनीतिक उतार चढ़ाव

सबलोग-131

वर्ष 15, अंक 9, सितम्बर 2024

ISSN 2277-5897 SABLOG
PEER REVIEWED JOURNAL

सम्पादक
किशन कालजयी

संयुक्त सम्पादक
प्रकाश देवकुलिश
राजन अग्रवाल

ब्यूरो
उत्तर प्रदेश : शिवाशंकर पाण्डेय
मध्य प्रदेश : जावेद अनीस
बिहार : कुमार कृष्णन
उत्तराखण्ड : सुप्रिया रतूड़ी
झारखण्ड : विवेक आर्यन

समीक्षा समिति (Peer Review Committee)
आनन्द कुमार
सुबोध नारायण मालाकार
मणीन्द्र नाथ ठाकुर
मंजु रानी सिंह
सफदर इमाम कादरी
राजेन्द्र रवि
मधुरेश
आनन्द प्रधान
महादेव टोप्पो
विजय कुमार
आशा
सन्तोष कुमार शुक्ल
अखलाक 'आहन'

प्रबन्ध निदेशक
अभय कुमार झा

सम्पादकीय सम्पर्क
बी-3/44, तीसरा तल, सेक्टर-16,
रोहिणी, दिल्ली-110089
+ 918340436365
sablogmonthly@gmail.com, sablog.in

वेब सहायक : गुलशन कुमार चौधरी

सदस्यता शुल्क
एक अंक : 40 रुपये–वार्षिक : 450 रुपये
द्विवार्षिक : 900 रुपये–आजीवन : 5000 रुपये

सबलोग
खाता संख्या-49480200000045
बैंक ऑफ बड़ौदा,
शाखा-बादली, दिल्ली
IFSC-BARB0TRDBAD
(Fifth Character is Zero)

स्वामी, सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक किशन कालजयी द्वारा बी-3/44, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110089 से प्रकाशित और लक्ष्मी प्रिण्टर्स, 556 जी.टी. रोड शाहदरा दिल्ली-110032 से मुद्रित।

पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

पत्रिका अव्यावसायिक और सभी पद अवैतनिक।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए न्यायक्षेत्र दिल्ली।

संवेद फाउण्डेशन का मासिक प्रकाशन

बाजार में शिक्षा

भारतीय शिक्षा की दिशाहीनता : **आनन्द कुमार** 4

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की विसंगतियाँ : **अरुण कुमार** 8

माफिया के शिकंजे में उच्च शिक्षा : **गोपाल प्रधान** 11

ज्ञान के स्वराज का दिवास्वप्न : **सतीश कुमार झा** 13

भारत में तकनीकी शिक्षा की पड़ताल : **प्रभाकर अग्रवाल** 15

नवउदारवाद और विश्वविद्यालयों के बदलते मायने : **चेतना त्रिवेदी** 18

बदहाल शिक्षा की अन्तहीन कहानी : **दिव्यानन्द** 20

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का बढ़ता दायरा : **हीना गोस्वामी** 22

बाजार में इतिहास-शिक्षा : **शान कश्यप** 24

सृजनलोक

छः कविताएँ : **विहाग वैभव,** टिप्पणी : **हृषीकेश सुलभ,** रेखांकन : **संजीव शाश्वती** 27

राज्य

महाराष्ट्र / देग में पकती सियासी खिचड़ी : **श्रीकान्त आप्टे** 29

झारखण्ड / मुद्दा बाँग्लादेशी घुसपैठियों का : **विवेक आर्यन** 31

स्तम्भ

चतुर्दिक / क्या भारत एक बन्धक राष्ट्र है? : **रविभूषण** 33

यत्र-तत्र / जेल जाने वाले पहले हिन्दी-लेखक : **जय प्रकाश** 36

तीसरी घण्टी / 'बकरी' केवल घास नहीं खाती : **राजेश कुमार** 39

कथित-अकथित / शेख हसीना का राजनीतिक उतार-चढ़ाव : **धीरंजन मालवे** 42

परती परिकथा / पूर्वी बंगाल, पूर्वी पाकिस्तान, बाँग्लादेश : **हितेन्द्र पटेल** 44

कविताघर / जो कविता से बड़ी कविताएँ होती हैं : **प्रियदर्शन** 47

विविध

साहित्य / मुक्त छन्द से छन्दमुक्ति तक : **राजेन्द्र गौतम** 49

शहरनामा / अदृश्य होती शहरी खेती : **राजेन्द्र रवि** 53

मुद्दा / राहुल गाँधी, जाति और सामाजिक न्याय : **संजीव चन्दन** 56

खेल / पेरिस ओलम्पिक में भारत : **शैलेन्द्र चौहान** 59

सिनेमा / सिनेमा में शिक्षा के सरोकार : **रक्षा गीता** 62

पुस्तक समीक्षा / स्मृति को विस्मृति से बचाने का आख्यान : **संजय जायसवाल** 65

लिये लुकाठी हाथ / कूड़ादान : **प्रेम जनमेजय** 66

आवरण : **शशिकान्त सिंह**

अगला अंक : पड़ोसी देशों का दबाव और द्वन्द्व

भारतीय शिक्षा की दिशाहीनता

आनन्द कुमार

आवरण कथा

शिक्षा व्यवस्था बीमार है और इसे स्वस्थ बनाने में किसी की दिलचस्पी नहीं है। जबकि शिक्षा के गुण-दोषों से कम-से-कम पाँच महत्त्वपूर्ण समूहों का सरोकार है—विद्यार्थी, शिक्षक, अभिभावक, शिक्षा विशेषज्ञ और राजनीतिज्ञ। विद्यार्थियों में एकता, शिक्षकों में साहस, अभिभावकों में क्षमता, शिक्षा विशेषज्ञों में प्रवृत्ति, और राजनीतिज्ञों की नीयत नहीं है। इसलिए जब शिक्षा को सुधारने के लिए एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ने सुझाव दिया कि शिक्षा-सुधार के लिए कानून बनाया जाए कि सरकारी कर्मचारियों के बच्चे सरकारी विद्यालय में ही पढ़ें तो किसी ने ध्यान नहीं दिया।

लेखक प्रसिद्ध समाजशास्त्री, जेएनयू के पूर्व प्राध्यापक तथा जवाहर लाल नेहरू स्मृति संग्रहालय और पुस्तकालय में वरिष्ठ शोधकर्ता हैं।
+919650944604
anandkumar1@hotmail.com

सुखिया सब संसार है-खाए और सोए
दुखिया दास कबीर है-जागे और रोए

भूमिका

आज भारत शिक्षाक्रान्ति में शामिल देशों का अगुवा है। भारत का शिक्षा बाजार लगभग 225 अरब डालर का हो चुका है। 2020 में भारत ने एक नयी शिक्षानीति भी अपनायी है। शिक्षा के लिए संसाधन जुटाने के प्रयत्न में 2% शिक्षा कर भी शुरू किया गया है। इससे पहले 2009 से शिक्षा को 6 से 14 बरस के सभी बच्चों का एक नागरिक अधिकार बनाया। यह काम हमें 1960 में करना था लेकिन देर से ही सही दुरुस्त कदम उठाया गया। बच्चों को मध्यान्ह भोजन की सुविधा के जरिये शिक्षा-अर्जन में भूख की अड़चन को दूर किया गया है। 2017 की जानकारी के अनुसार इसका लाभ 12, 65, 000 विद्यालयों के 12 करोड़ बच्चों को मिला। दूसरे छोर पर, उच्च शिक्षा में 4 करोड़ 33 लाख विद्यार्थी 58, 000 संस्थानों में पढ़ाई में जुटे हैं। इसमें 2 करोड़ छात्राएँ थीं। इनमें से 79 % स्नातक, 12% स्नातकोत्तर, और 0.5% शोध (पी-एच. डी.) में थे। स्नातक शिक्षा ले रहे विद्यार्थियों में 34% आर्ट्स, 15% विज्ञान, 13% वाणिज्य, 13% इंजीनियरिंग\ टेकनलोजी की पढ़ाई में थे। स्नातकोत्तर शिक्षा में 35% समाज विज्ञान। 15% विज्ञान और 24% वाणिज्य प्रबन्धन की धरा में थे। देश में स्त्रियों, दलितों, आदिवासियों, पसमांदा मुसलमानों और विकलांगता पीड़ित बच्चे-बच्चियों की शिक्षा के लिए विशेष प्रावधान और आरक्षण किये गये हैं। 5-6 बरस आयु समूह के 93% बच्चों को प्राथमिक शिक्षा विद्यालयों में, 10-12 बरस के 60% को माध्यमिक स्कूलों में और 18-23 बरस के आयु समूह के 25% युवक-युवतियों को उच्च शिक्षा के लिए प्रवेश मिला हैं।

'खुला दाखिला, सस्ती शिक्षा—लोकतन्त्र की यही परीक्षा!' साठ के दशक के विद्यार्थी जुलूसों का एक महत्त्वपूर्ण नारा था। लेकिन जब नारा लगानेवाले विद्यार्थी नेता अस्सी और नब्बे के दशक से लगातार सत्ता संचालन में शामिल हुए तो शिक्षा को मुनाफे का धन्धा बनाने में जुट गये। आज तमाम दावों के बावजूद भारत की शिक्षा व्यवस्था 1. नर-नारी, 2. गाँव-शहर, 3. जातिभेद, 4. अमीर-गरीब के वर्गभेद, और 5. अँग्रेजी भाषा माध्यम से जुडी विषमताओं से पीड़ित है। उदाहरण के लिए, हमारे शहरों के 50% बच्चे 'पब्लिक स्कूल' (निजी संस्थाओं के अँग्रेजी माध्यम के स्कूल) में पढ़ते हैं। वैसे पूरे देश में 65% बच्चे सरकारी विद्यालयों में हैं लेकिन अधिकांश प्रदेशों में बाजारीकरण और निजीकरण की आन्धी चल रही है। प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा और शोध संसार में अँग्रेजी का वर्चस्व है। देशी भाषाओं के माध्यम से चल रहे राज्यपोषित विश्वविद्यालय और महाविद्यालय दोयम दर्जे के ज्ञान केन्द्र माने जाते हैं।

स्वराज यात्रा में शिक्षा को 1. चरित्र निर्माण 2. आजीविका अर्जन की क्षमता,

3. राष्ट्रनिर्माण और 4. मानवता निर्माण का रचनात्मक माध्यम बनाने की कल्पना की गयी थी। लोकतन्त्रीकरण, उपनिवेशवाद से मुक्ति, राष्ट्रीय एकता और चहुमुखी प्रगति में योगदान की अपेक्षा थी। लेकिन इन चारो मोर्चों के नतीजे निराशाजनक हैं। बाजारीकरण की बाढ़ से शिक्षा मुनाफे का धन्धा हो गयी है। आज हमारे शिक्षा केन्द्रों में राजनीतिकरण, भ्रष्टाचार और व्यवसायीकरण का खुला इस्तेमाल हो रहा है। सरकारी संस्थानों में कुलपति से लेकर शिक्षकों की नियुक्ति में पैसे का लेन-देन और राजनैतिक पक्षपात के मामले सामने आते रहते हैं। अधिकांश निजी संस्थान पैसे के बल पर शिक्षा और डिग्री देने के काम में जुटे रहते हैं। इससे नयी पीढ़ी में येन-केन-प्रकारेण धनशक्ति-सम्पन्न होने की भूख का बोलबाला है। सत्यनिष्ठा की बजाय अवसरवादिता को बढ़ावा मिल रहा है। 'नयी आर्थिक नीतियों' के परिणामस्वरूप 21वीं शताब्दी 'रोजगार विहीन आर्थिकी' का युग है और 75% उच्च-शिक्षित युवा भारत में किसी भी रोजगार या नौकरी के लिए अक्षम पाये जा रहे हैं। शिक्षा और राष्ट्रनिर्माण परस्पर निर्भर सामाजिक प्रक्रियाएँ हैं फिर भी अधिकांश शिक्षित भारतीय नागरिकता की बजाय जाति, सम्प्रदाय और अन्य भेदमूलक अस्मिताओं के प्रति ज्यादा आग्रही होते जा रहे हैं। राष्ट्रीयता की बजाय प्रादेशिकता और क्षेत्रीयता ज्यादा आकर्षित करती है। शिक्षा के जरिये हिंसा और शोषण मुक्त दुनिया बनाने का लक्ष्य तो सपनों की बात हो गयी है। मनुष्य के जीवन में सत्य और अहिंसा का संचार करने और प्रतिस्पर्धा और ईर्ष्या के स्थान पर सहयोग और प्रेम आधारित मानव परिवार का सदस्य बनने-बनाने की होड़ की ओर बढ़ने की शिक्षा कैसे मिलेगी?

शिक्षा-सुधार का सिलसिला

शिक्षा व्यवस्था के दोषों के इलाज की कोशिशों का लम्बा इतिहास भी जरूर है। इसमें कोठारी आयोग (1966) की रपट सबसे महत्त्वपूर्ण मानी गयी है। वैसे राधाकृष्णन आयोग, राममूर्ति आयोग, यशपाल आयोग, अम्बानी-बिड़ला समिति, तापस मजूमदार समिति, पित्रोदा आयोग और सुब्रमण्यम आयोग की सिफारिशों की भी कभी-कभी चर्चा होती है। इधर 2020 में कस्तूरीरंगन आयोग की सिफारिशों पर आधारित 'नयी शिक्षा नीति' की स्वयं प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी द्वारा प्रस्तुति की गयी है। लेकिन उसकी भाषा सम्बन्धी सिफारिशों का तमिलनाडु सरकार द्वारा विरोध और वित्त सम्बन्धी जरूरतों का लगातार चार साल से वित्त मन्त्रालय द्वारा अनदेखी के कारण इसका शोर ज्यादा है और असर बहुत कम। संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन से आगे बढ़कर अपने-आप स्वयं को 'विश्वगुरु' घोषित करने में जुटे भारत में अभी शिक्षा का अधिकार (2007) ग्रामीण बेटियों, दलित, आदिवासी और पसमान्दा परिवारों के बच्चों को और विकलांगता से पीड़ित लड़के-लड़कियों को उपलब्ध कराने के लिए संसाधनों की कमी पड़ रही है। हम साक्षरता के मोर्चे पर विश्व औसत (पुरुष 90%, स्त्री 84%) और चीन (पुरुष 99%, स्त्री 98%) के मुकाबले पिछड़े (पुरुष 84%, स्त्री 67%) हुए हैं। मानव प्रगति की कसौटी पर 193 देशों में चीन 75वें और भारत 134वें स्थान पर पाया गया है। श्रीलंका और बाँग्लादेश तक बेहतर स्थिति में हैं। भारतीय शिक्षा के दोषों के सन्दर्भ में एक और तथ्य विचारणीय है। इधर के दिनों में 2022 में भारत में अन्य देशों से 46, 000 विदेशी विद्यार्थी आये जिसमें से 28% नेपाल, 7% अफगानिस्तान, 6% बाँग्लादेश और 3% भूटान से थे। 7% संयुक्त राज्य अमरीका से भी थे। जबकि भारत से विदेशों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए साढ़े सात लाख छात्र-छात्राएँ गये और पिछले 10 वर्षों में 10 लाख सुशिक्षित भारतीयों ने भारत की नागरिकता त्याग कर अन्य देशों को अपना देश बना लिया है।

साठ के दशक में शिक्षा-पद्धति और बेरोजगारी की जुड़वाँ समस्याओं के सन्दर्भ में विद्यार्थी असन्तोष का विस्तार हुआ। इसे कई विचारधाराओं, दलों और राष्ट्रीय नेताओं से सहानुभूति और मार्गदर्शन भी मिला। इसमें दिल्ली, पंजाब, कोठारी आयोग के विश्लेषण में शिक्षा की व्यवस्था में बुनियादी बदलाव करने और शिक्षा के अवसर बढ़ाने के लिए संसाधन बढ़ाने पर बल देने से विद्यार्थी असन्तोष के प्रति दृष्टिकोण बेहतर हुआ। हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, गुजरात और केरल में उल्लेखनीय मुद्दे उठाये गये। तत्कालीन सत्ता प्रतिष्ठान ने इसे 'अनुशासनहीनता' करार दिया और शिक्षण संस्थाओं को पुलिस और सेना के हवाले सौंपने के उपाय किये। 1969-70 में विद्यार्थी संवाद भी आयोजित किये गये। लेकिन समाजवादी नेता डॉ. लोहिया ने विद्यार्थियों के राजनीति से जुड़ने का आवाहन किया। शिक्षा में बने हुए अँग्रेजी वर्चस्व को हटाने को राष्ट्रीय आन्दोलन का अधूरा सपना बताया और विद्यर्थियों के साथ राजधानी में 1965 में एक बहुचर्चित 'विद्यार्थी मार्च' का आयोजन किया और गिरफ्तारी दी। इससे विद्यार्थियों में लोहिया और समाजवादियों का आकर्षण बढ़ा। समाजवादी युवजन सभा (सयुस) और युवा क्रान्ति दल (युक्रांद) को फैलाव मिला। भाषा के सवाल ने उत्तर भारत में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और विद्यार्थी परिषद् से जुड़े युवकों को भी आकर्षित किया। जबकि यह संगठन भाषा आन्दोलन के पहले तक विद्यार्थियों को राजनीति से दूर रहने का समर्थक था। समाजवादी चिन्तक मधु लिमये ने लोकसभा में दो निजी विधेयक प्रस्तुत करके मताधिकार की आयु घटाकर 18 वर्ष करने तथा हर युवजन को रोजगार का अधिकार देने और शिक्षा संचालन में विद्यार्थियों की भागीदारी की माँगों को राष्ट्रीय आकार दिया–'18 वर्ष से दो अधिकार–रोजगार और मताधिकार!' मार्क्सवादियों के युवा संगठनों में माओवाद की लहर फैली जिसे नक्सलवाद की संज्ञा देकर बर्बर दमन का शिकार बनाया गया। दलित पैन्थर के रूप में जातिप्रथा से प्रताड़ित शिक्षित युवाओं का प्रतिरोध भी सामने आया। हिन्दी साम्राज्यवाद का भय तमिलनाडु में विद्यार्थी आन्दोलन का कारण बना। मुस्लिम युवाओं ने सत्य शोधक समाज को नवजीवन दिया। बेरोजगारी, क्षेत्रीय विषमता और शिक्षा के अवसरों के अभाव को लेकर आन्ध्रप्रदेश, पंजाब और हरियाणा में नये प्रदेशों के लिए आन्दोलन हुए। इन आन्दोलनों से विद्यार्थियों में राजनीतिक चेतना का फैलाव हुआ और राजनैतिक संगठनों से जुड़ाव का विस्तार हुआ। विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में छात्रसंघ स्थापित हुए और छात्रसंघों के चुने हुए पदाधिकारी विद्यार्थी समस्याओं के प्रवक्ता के रूप में अपनी पहचान बनाने में सफल हुए। इन प्रवृत्तियों से व्यवस्था के प्रति असन्तोष को गहराई मिली और 'काँग्रेस हटाओ' की राजनीतिक कोशिशों से युवाओं का जुड़ाव हुआ।

लेकिन यह निर्विवाद तथ्य है कि शिक्षा-सुधार के प्रयासों और आन्दोलनों को पूर्ण अभिव्यक्ति और सम्मान लोकनायक जयप्रकाश नारायण के 'सम्पूर्ण क्रान्ति आन्दोलन' से प्राप्त

हुआ। 5 जून, 74 से आरम्भ इस आन्दोलन की पृष्ठभूमि में (क) जयप्रकाश नारायण का मार्गदर्शन, (ख) गुजरात के 'नवनिर्माण आन्दोलन' से उत्पन्न विद्यार्थी-युवा शक्ति की चेतना, तथा (ग) बिहार के छात्र-विद्रोह की ऊर्जा थी। शिक्षा के संकट को देश की दशा से जोड़कर देखने की जरूरत पर बल दिया गया। जेपी ने विद्यार्थियों के असन्तोष को 'अनुशासनहीनता' और कानून-व्यवस्था की समस्या मानने से इनकार करते हुए इसमें निहित क्रान्तिकारिता को विकसित करते हुए दो-टूक शब्दों में कहा कि एक ऐसी क्रान्ति की जरूरत है जो तीव्र गति से व्यक्ति और समाज दोनों में सर्वांगीण मौलिक और दूरगामी परिवर्तन के जरिये मौजूदा समाज से भिन्न एक नया समाज बनाये। वह भारत के आभिजात्य वर्ग ('एलीट') की जीवन-दृष्टि से भिन्न 'अन्त्योदय' और 'सर्वोदय' के लिए प्रतिबद्ध हो। हम चाहते हैं कि अब तक की हिंसक राजनीतिक क्रान्तियों से अलग गाँधीमार्ग से यानी अहिंसक तरीके से एक सम्पूर्ण क्रान्ति सम्पन्न हो; यह सत्ता हथियाने की लड़ाई नहीं है। बल्कि व्यवस्था-परिवर्तन, प्रक्रिया-परिवर्तन और नव-निर्माण की बात है।

बिहार के आन्दोलनकारी विद्यार्थियों ने जेपी के आवाहन को आकर्षक नारे में बदल दिया–'सम्पूर्ण क्रान्ति अब नारा है, भावी इतिहास हमारा है!'। जेपी ने आगे समझाया कि सम्पूर्ण क्रान्ति के सात आयाम होंगे–1. सामाजिक, 2. आर्थिक, 3. राजनीतिक, 4. सांस्कृतिक, 5. वैचारिक अथवा बौद्धिक, 6. शैक्षणिक, तथा 7. आध्यात्मिक। सम्पूर्ण क्रान्ति आन्दोलन की वाहक लोकशक्ति होगी जिसके दो पहिये होंगे–छात्र संघर्ष समिति और लोकसमिति। क्रान्तिकारी नवनिर्माण के लिए शान्तिमय सक्रियता और लोकनीति आधारित निर्दलियता की शर्तें रखी गयीं। बिहार आन्दोलन के दौरान 18 मार्च, 74 के विधानसभा प्रदर्शन के जरिये प्रस्तुत माँगपत्र में तात्कालिक शिक्षा-सुधार की 12 माँगें थीं। लेकिन जेपी की शैक्षणिक क्रान्ति सम्बन्धी दृष्टि का क्रमिक विकास 1969 में मुसहरी (मुजफ्फरपुर) में माओवादियों से हुए आमना-सामना, चम्बल में सैकड़ों बागियों के आत्म-समर्पण, सर्वोदय आन्दोलन की रजत जयन्ती सम्मेलन (राजगीर), बाँग्लादेश मुक्ति संग्राम के लिए विश्व-जनमत निर्माण और भारतीय लोकतन्त्र की विकृतियों से साक्षात्कार के दौरान हुआ था। इसके कुछ संकेत काशी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त भाषण (1970) और 'यूथ फॉर डेमोक्रेसी' आवाहन (1973) में दिये गये थे।

शिक्षा-सुधार के लिए शिक्षाविदों की समिति से मिले सुझावों से भी स्पष्टता मिली। 6 मार्च, 1975 को हुए ऐतिहासिक 'संसद मार्च' के जरिये जेपी द्वारा भारत की संसद को दिये गये ज्ञापन में शिक्षा-सुधार के 5 बिन्दुओं को रेखांकित भी किया गया–1. शिक्षा समाज के लोकतान्त्रिक निर्माण का माध्यम बने और यह पश्चिमीकरण के बदले आधुनिकीकरण का साधन हो। 2. राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षा के गुण और तत्त्व के विकास के लिए कारगर कदम उठाये जाएँ। मौजूदा ढाँचे में प्रत्येक स्तर पर सुधार किया जाये। 3. माध्यमिक स्तर से शिक्षा को रोजगार अभिमुखी बनाया जाये, जिसके साथ आर्थिक योजना की ऐसी प्रणाली हो जो रोजगार की गारंटी करे। शिक्षण सम्बन्धी नौकरियों को छोड़ अन्य नौकरियों के लिए विश्वविद्यालय की डिग्री आवश्यक न रहे। 4. पाँच वर्षों के अन्दर प्राथमिक शिक्षा और वयस्क शिक्षा के सार्वत्रिक प्रसार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाये। 5. शिक्षण संस्थाओं में सरकार के हस्तक्षेप पर रोक लगायी जाये। इन संस्थाओं का प्रबन्ध सामान्यतः उनके शिक्षकों को सौंपा जाये और उसमें लोकतान्त्रिक ढंग से विद्यार्थियों की भागीदारी हो।

सम्पूर्ण क्रान्ति के सन्दर्भ में शैक्षणिक क्रान्ति की व्याख्या करते हुए जयप्रकाश नारायण ने मौजूदा शिक्षा के बहिष्कार की जरूरत बतायी। क्यों? क्योंकि यह शिक्षा दोषपूर्ण है और विद्यार्थियों का भविष्य अन्धकारमय है। आज भी अँग्रेजों की बनायी हुई शिक्षा-पद्धति ही लागू है। शिक्षा को जीवनोपयोगी होना चाहिए। वर्तमान शिक्षा सिर्फ नौकरी खोजने और दर-दर ठोकर खाने का शिक्षण है। नौकरियाँ नहीं मिलती हैं तो जीवनयापन का रास्ता ही नहीं रहता। इसमें डिग्री का झूठा मोह है। क्या करें? शिक्षाशास्त्रियों की आम राय है कि प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा में आमूल परिवर्तन होना चाहिए। योग्यता केवल डिग्री से न आँकी जाये। इसका रोजगार से कोई समबन्ध न रहे। न्यूनतम शिक्षा सबको सुलभ हो और अज्ञान तथा निरक्षरता का निर्मूलन किया जाये। विद्यार्थियों में विवेकपूर्वक विचार की शक्ति का विकास होना चाहिए और शिक्षा श्रममूलक होनी चाहिए।

शिक्षा का औपनिवेशीकरण और स्वदेशी विकल्प

हमारी शिक्षा का औपनिवेशीकरण 1835 में अँग्रेजी शासन के दौरान लार्ड मैकाले की दिखायी राह की ओर मुड़ने से शुरू हुआ। 1860 में मुम्बई, कोलकाता और चेन्नयी में लन्दन विश्वविद्यालय जैसे तीन विश्वविद्यालय स्थापित किये जाने से इसकी जड़ें मजबूत हुईं। फिर भी शिक्षा पर न्यूनतम खर्च करने की ब्रिटिश राज की नीति के कारण अँग्रेजों के भारत छोड़ने के मौके पर देश में मात्र 20 विश्वविद्यालय और 491 कॉलेज थे जिसमें कुल 2 लाख 41 हजार 319 विद्यार्थी थे। लेकिन पूरी सत्ता व्यवस्था–सचिवालय से लेकर न्यायालय और अस्पताल से लेकर सेना तक–का संचालन अँग्रेजी भाषा में प्रशिक्षित और अँग्रेजों द्वारा नियन्त्रित 'भूरे' साहबों के माध्यम से हो रहा था। पश्चिमीकरण ही आधुनिकीकरण था। 'मानसिक गुलामी' आभिज्यात वर्ग का आभूषण थी। अँग्रेजी महारानी थी और संस्कृत, अरबी तथा सभी भारतीय भाषाएँ दासी की भूमिका में धकेली जा चुकी थीं। मैकाले का लगाया औपनिवेशिक शिक्षा का विषवृक्ष आजादी के दशकों बाद भी पुष्पित-पल्लवित हो रहा है।

यह सच है कि विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महात्मा गाँधी जैसे मुट्ठी-भर भविष्यद्रष्टा शिक्षा के संकट के प्रति सजग थे। इसलिए स्वराज की परिभाषा में 'बौद्धिक स्वराज' एक अनिवार्य तत्त्व बनाया गया। हमारे देश में गाँधी के नेतृत्व और डॉ. जाकिर हुसैन के मार्गदर्शन में 1921 के असहयोग आन्दोलन से शुरू और 1937 से 'रचनात्मक कार्यक्रम' का अंग बनी 'नयी तालीम' सबसे महत्त्वपूर्ण विकल्प निर्माण अभियान था। एक अरसे तक गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का शान्ति निकेतन स्वदेशी शिक्षा का प्रतिमान था। इसमें गुजरात विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ और जामिया मिलिया इस्लामिया ने अपना-अपना अमूल्य योगदान किया। इस प्रयोग को 1937 से 1987 के पचास बरसों में आर्यनायकम, आशा देवी, राधाकृष्ण, कमला,